Simon Wolf

Shri Ramcharit Manas Me Brahman Varnan.pdf

hcg77 final

research paper

Indian Institute of Science Education and Research (IISER) Mohali

Document Details

Submission ID

trn:oid:::1:3627752973

Submission Date

Aug 15, 2026, 7:24 PM GMT+5:30

Download Date

Aug 15, 2026, 7:25 PM GMT+5:30

File Name

Shri_Ramcharit_Manas_Me_Brahman_Varnan.pdf

File Size

830.7 KB

10 Pages

3,298 Words

11,295 Characters

7% Overall Similarity

The combined total of all matches, including overlapping sources, for each database.

Filtered from the Report

- Bibliography
- Quoted Text
- Cited Text

Top Sources

5% Internet sources
1% Publications
2% Submitted works (Student Papers)

Integrity Flags

0 Integrity Flags for Review

No suspicious text manipulations found.

Our system's algorithms look deeply at a document for any inconsistencies that would set it apart from a normal submission. If we notice something strange, we flag it for you to review.

A Flag is not necessarily an indicator of a problem. However, we'd recommend you focus your attention there for further review.

Top Sources

5% Internet sources
1% Publications
2% Submitted works (Student Papers)

Top Sources

The sources with the highest number of matches within the submission. Overlapping sources will not be displayed.

1	Internet	
	www.irctc.com	1%
2	Publication	
	Chander, Akashman Subhash. "Vartaman Paripeksh me Natyashastra me Varnit T...	<1%
3	Student papers	
	Malaviya National Institute of Technology	<1%
4	Student papers	
	University of Rajasthan	<1%
5	Internet	
	eparlib.nic.in	<1%
6	Student papers	
	Pacific University	<1%
7	Internet	
	www.universityofpatanjali.com	<1%
8	Student papers	
	Shri Shankaracharya Technical Campus	<1%
9	Internet	
	ia801808.us.archive.org	<1%
10	Internet	
	www.futuresamachar.com	<1%
11	Student papers	
	Indian Institute of Technology Roorkee	<1%

12 Student papers

Rajiv Gandhi Proudyogiki Vishwavidyalaya <1%

13 Internet

cdn1.byjus.com <1%

14 Internet

skylarkpublication.in <1%

15 Internet

bprd.nic.in <1%

16 Internet

ia801802.us.archive.org <1%

17 Internet

ia801909.us.archive.org <1%

18 Internet

www.rsaraj.org <1%

श्री रामचरितमानस में ब्राह्मण वर्णन : एक अनुशीलन

डॉ. अनामिका अवस्थी
प्रोजेक्ट सहायक
अ.पी.जी. कालेज, बांदा

एवम्

प्रो. एन.एल. मिश्र
अध्यक्ष एवं पूर्व अधिष्ठाता
कला संकाय, म.गां.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट (म.प्र.)

सारांश

आधुनिक समय विकास और उत्थान का है। बढ़ती शिक्षा व्यवस्था ने लोगों को जागरूक किया है। यह जागरूकता एकदिश न होकर बहुदिश है। इसका परिणाम यह हुआ है कि लोग अन्धविश्वास, रूढ़िवादिता और पूर्वाग्रह पर बहुत चिंतन–मनन कर रहे हैं और सभी तथ्यों की विवेचना, वैज्ञानिक, तर्क–वितर्क और अपने अधकचरे ज्ञान के आधार पर करने लगे हैं। अपने देश में दो तरह के दर्शन आस्तिक और नास्तिक, सगुण और निर्गुण का आस्तित्व है। *'मानो तो देव नहीं तो पत्थर'* इस उक्ति का भी यही अर्थ है। हिन्दू धर्म में चार वर्ण की बात आती है और प्रथम वर्ण ब्राह्मण है। इसमें कोई संशय नहीं है कि हिन्दू संस्कृति और सनातक धर्म के ज्ञान के विस्तार में ब्राह्मणों की भूमिका सर्वोपरि है। ज्ञान का प्रकाश जितना ब्राह्मणों ने फैलाया वह अकाट्य है, शब्दों की सीमा में उसे बांधा नहीं जा सकता पर समय प्रवाह में बहुत सी बातें अप्रासंगिक भी हो गयी होंगी। किंतु अप्रासंगिकता को भी तर्क का आधार चाहिए। जिस समय हमारे उपनिषद्, स्मृतियाँ, पुराण आदि ग्रन्थ लिखे गये होंगे, उस समय ज्ञान अपने चरम पर था। हजारों वर्षों की गहन साधना से वह ज्ञान अर्जित किया गया होगा पर आज जो लोग आधुनिक समय की कसौटी पर उसे परख रहे हैं वे कहाँ खड़े हैं, इसका अन्दाजा उन्हें नहीं है। इसी परिप्रेक्ष्य में यहाँ एक प्रयास किया गया है कि गोस्वामी तुलसीदास ने श्री रामचरित मानस में ब्राह्मणों को किस रूप में लिया है तथा उनकी क्या–क्या भूमिकायें रहीं हैं और मृत्युलोक में ब्राह्मणों के कौन–कौन से गुण अनुकरणीय है तथा मानव मात्र के कल्याण के लिए उनका धर्म और कर्म क्या है।

की–वर्ड्स : ब्राह्मण, द्विज, कर्म, धर्म, प्रत्यक्षीकरण, प्रासंगिकता।

प्रस्तावना

आधुनिक समय में समाज अजीबोगरीब सांस्कृतिक संकट में फँसा हुआ है। अभियांत्रिकी, प्रौद्योगिकी एवं वैज्ञानिक नवाचार ने मनुष्य के मन को गहरे तक प्रभावित किया है। भारतवर्ष में ऋषियों ने जो जीवन विद्या समाज को दी थी उसके सामने एक संकट आ खड़ा हुआ है। मानव यह निश्चित नहीं कर पा रहा है कि वह किधर जाय। हालाकि वह आगे बढ़ता जा रहा है पर अन्धी गली में। आवश्यकता है इस बात की कि

उसे रास्ता दिया जाय। समाज में स्वार्थ के चलते एक वैमनस्य जन्म ले चुका है। उसे लगता है कि ब्राह्मणों ने जो भी ज्ञान समाज को दिया वह भविष्य में उन्हीं के लिये लाभप्रद है और शेष समाज उस ज्ञान से हमेशा शोषित बना रहेगा। वे लोग उदाहरण भी प्रस्तुत करते है कि तुलसीदास ने ऐसा क्यों लिखा कि–

पूजहिं विप्र सकल गुणहीना, शूद्र न पूजहुं वेद प्रवीणा।

विप्र हमेशा पूजनी है, चाहे वह गुणों से हीन ही क्यों न हो, लेकिन वेद में प्रवीण होने पर भी शूद्र की पूजा नहीं करनी चाहिए।

5 इस पर आपत्ति तो उचित है पर यह स्मरण रखना चाहिये कि ज्ञान और आचरण, आहार और विहार ये सभी बातें अलग–अलग हैं। ज्ञानी का आचरण आवश्यक नहीं कि सात्विक हो। उसी प्रकार गुणहीन ब्राह्मण, पथभ्रष्ट ब्राह्मण या मानसिक रूप से बीमार या कमजोर ब्राह्मण समाज में कैसे पूजनीय हो सकता है। आजार–विहार, आचरण, शुद्धता, ज्ञान, सिद्धि, जप–तप के बल पर ''रैदास'' पूजनीय हैं। कबीर, रहीम सभी पूजनीय हैं।

प्रस्तुत शोध–पत्र में इसी बात को देखने का प्रयास किया गया है कि गोस्वामी जी मात्र ब्राह्मणों के महत्व को रेखांकित करने का प्रयास भर नहीं करते बल्कि दुर्गुणी ब्राह्मणों की निन्दा भी करते हैं। वे कहते हैं–

सोचि विप्र जो वेद विहीना, तजि निज धर्म विषय लवलीना।

इसी क्रम में श्री रामचरित मानस में वर्णित ब्राह्मण महत्व को सभी सात काण्डों में देखने का प्रयास किया गया है।

बालकाण्ड

बंदउँ प्रथम महीसुर चरना।

मोह जनित संसय सब हरना।। (दो. 1 चौ. 2)

तुलसीदास जी ग्रंथ की शुरुआत में सबसे पहले महीसुर अर्थात् ब्राह्मण के चरणों की वंदना करते हैं। वे कहते हैं कि इनके चरणों का स्मरण करने से मोह से उत्पन्न सभी संशय दूर होते हैं। यहाँ ब्राह्मण को
12 ज्ञान और अज्ञान को दूर करने वाले व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। रचना के आरंभ में ब्राह्मण का स्मरण श्रद्धा तथा विनय की भावना को प्रकट करता है।

बिबुध बिप्र बुध ग्रह चरन बंदि कहउँ कर जोरि।
होइ प्रसन्न पुरवहु सकल मंजु मनोरथ मोरि।। (दो.–14)

इस दोहे में देवता, विप्र, बुद्धिमान व्यक्तियों और ग्रहों के चरणों में हाथ जोड़कर प्रार्थना की गई है कि वे प्रसन्न होकर सभी सुंदर मनोरथों को पूरा करें। यहाँ ब्राह्मण को देवताओं और विद्वानों के साथ सम्माननीय स्थान दिया गया है। इस प्रसंग में विप्र का उल्लेख मंगलकामना और श्रद्धा के संदर्भ में हुआ है।

सिंघासनु अति दिब्य सुहावा।
जाइ न बरनि बिरंचि बनावा।।
बैठे सिव बिप्रन्ह सिरु नाई।
हृदयँ सुमिरि निज प्रभु रघुराई।। (दो.–11 चौ. 2)

शिव–पार्वती विवाह के प्रसंग में शिवजी द्वारा विप्रों को सिर नवाकर सम्मान देने का वर्णन मिलता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि विवाह जैसे शुभ और धार्मिक अवसरों पर ब्राह्मणों का सम्मान महत्वपूर्ण माना जाता था। शिवजी द्वारा विप्रों को नमन करना उनके प्रति आदर और विनय की भावना को व्यक्त करता है।

तपबल बिप्र सदा बरिआरा।
तिन्ह के कोप न कोउ रखवारा।।
जौं बिप्रन्ह बस करहु नरेसा।
तौ तुअ बस बिधि बिष्नु महेसा।। (दो–169, चौपाई–2)

विप्रों के तपबल को अत्यंत प्रभावशाली बताया गया है। उनके कोप से कोई भी सहज रूप से बच
9 नहीं सकता। राजा को यह समझाया गया है कि विप्रों के प्रति अनुचित व्यवहार के गंभीर परिणाम हो सकते हैं। इस प्रकार यहाँ ब्राह्मणों के प्रति सम्मान का आधार उनके तप और धार्मिक प्रभाव को माना गया है।

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।। (दो. 192)

इस प्रसंग में भगवान के मनुष्य रूप में अवतार लेने का संबंध विप्र, गौ, देवता और संतों के हित से
1 जोड़ा गया है। यहाँ ब्राह्मण को धार्मिक व्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्थान दिया गया है। भगवान का अवतार इन सभी के हित तथा व्यापक धर्म–रक्षा से संबंधित बताया गया है।

नंदीमुख सराध करि जातकरम सब कीनह।
हाटक धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह।। (दो.–193)

श्रीराम के जन्म के अवसर पर राजा दशरथ द्वारा जातकर्म आदि संस्कार संपन्न कराए जाते हैं तथा ब्राह्मणों को सोना, गाय, वस्त्र और मणि आदि दान दिए जाते हैं। इससे तत्कालीन धार्मिक जीवन में संस्कार और दान की परंपरा का पता चलता है। इस प्रसंग में ब्राह्मणों को दान देना सम्मान और धार्मिक कर्तव्य की अभिव्यक्ति के रूप में दिखाई देता है।

मारि असुर द्विज निर्भयकारी।
अस्तुति करहिं देव मुनि झारी।। (दो. 209, चौ. 3)

इस प्रसंग में श्रीराम असुरों का वध करके द्विजों को भय से मुक्त करते हैं। इसके बाद देवता और मुनि श्रीराम की स्तुति करते हैं। विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के माध्यम से ब्राह्मणों के धार्मिक कार्यों की सुरक्षा को धर्म–रक्षा के व्यापक संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है।

जय सुर बिप्र धेनु हितकारी।
जय मद मोह कोह भ्रम हारी।। (दो. 284, चौ. 1)

श्रीराम की स्तुति करते हुए उन्हें देवता, विप्र और गौ के हितकारी बताते हैं। साथ ही उन्हें मद, मोह, क्रोध और भ्रम को दूर करने वाला कहा गया है। इस प्रसंग में श्रीराम के स्वरूप को विप्र–हितकारी बताते हुए ब्राह्मणों के हित को भगवान के व्यापक लोककल्याणकारी कार्य से जोड़ा गया है।

बंदि बिप्र सुर गुर पितु माता।
पाइ असीस मुदित सब भ्राता।। (दो. 357, चौ. 4)

बारात के अयोध्या लौटने पर विप्र, देवता, गुरु तथा माता–पिता को प्रणाम करके आशीर्वाद प्राप्त किया जाता है। इस प्रसंग में ब्राह्मणों का सम्मान शुभ अवसर पर किए जाने वाले धार्मिक और सामाजिक व्यवहार के रूप में दिखाई देता है। उनके आशीर्वाद को मंगलकारी माना गया है।

अयोध्याकाण्ड

पूजहु गनपति गुर कुलदेवा।
सब बिधि करहु भूमिसुर सेवा।। (दो. 5, चौ. 4)

रामराज्याभिषेक की तैयारी के प्रसंग में गणपति, गुरु और कुलदेवता की पूजा के साथ भूमिसुर अर्थात् ब्राह्मणों की सेवा करने का निर्देश दिया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि राज्याभिषेक जैसे महत्वपूर्ण मांगलिक अवसर पर ब्राह्मणों का सम्मान और सेवा धार्मिक कर्तव्य का हिस्सा माना जाता था।

बिप्र साधु सुर पूजत राजा।
करत राम हित मंगल काजा।। (दो. 6 चौ. 1)

राजा विप्र, साधु और देवताओं की पूजा करते हुए श्रीराम के हित में मंगल कार्य करते हैं। यहाँ ब्राह्मण को साधु और देवता के साथ सम्माननीय स्थान दिया गया है। प्रसंग से यह स्पष्ट होता है कि राज्य के महत्वपूर्ण धार्मिक कार्यों में विप्रों का सम्मान किया जाता था।

आनंद मगन राम महतारी।
दिए दान बहु बिप्र हँकारी।। (दो. 7, चौ. 2)

श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारी से माता कौशल्या अत्यंत प्रसन्न हैं और वे ब्राह्मणों को बुलाकर उन्हें बहुत–सा दान देती हैं। इस प्रसंग में शुभ अवसर पर दान देने की धार्मिक परंपरा दिखाई देती है। ब्राह्मणों को दान देना सम्मान और धार्मिक कर्तव्य से जुड़ा हुआ है।

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुरहित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जग जाल।। (दो. 93)

इस प्रसंग में भगवान के मनुष्य रूप धारण करने का संबंध भक्तों, पृथ्वी, भूसुर अर्थात् ब्राह्मणों, गौ और देवताओं के हित से जोड़ा गया है। भगवान के चरित्र को सुनने से संसार के मोह और बंधन दूर होने की बात भी कही गई है। यहाँ ब्राह्मणों का उल्लेख भगवान के व्यापक लोककल्याणकारी उद्देश्य के अंतर्गत हुआ है।

मंगल मूल बिप्र परितोषू।
दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू।। (दो. 125, चौ. 2)

2 इस चौपाई में विप्र का संतोष मंगल का मूल और भूसुर का रोष अत्यंत प्रभावशाली बताया गया है। इसके
7 माध्यम से ब्राह्मणों के प्रति सम्मानपूर्ण और विनयपूर्ण व्यवहार की आवश्यकता पर बल दिया गया है। विप्र के संतोष को कल्याणकारी और उसके रोष को विनाशकारी बताया गया है।

सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी।
प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी।।
कर नित करहिं राम पद पूजा।
राम भरोस हृदयँ नहि दूजा।। (दो. 128, चौ. 2)

इस प्रसंग में देवता, गुरु और द्विज को देखकर सिर नवाने तथा विशेष विनय करने की बात कही गई है। इसके साथ श्रीराम के चरणों की नित्य पूजा और उनके प्रति पूर्ण विश्वास का वर्णन है। इससे द्विज और गुरु के प्रति सम्मान को धार्मिक आचरण तथा श्रीराम की भक्ति के साथ जोड़ा गया है।

मुनि महिदेव साधु सनमाने।
बिदा किए हरि हर सम जाने।। (दो. 318, चौ. 2)

इस प्रसंग में मुनियों, महिदेव अर्थात् ब्राह्मणों और साधुओं का सम्मान करके उन्हें विदा किया जाता है। उन्हें हरि–हर के समान मानकर सम्मान देना उनके प्रति उच्च आदरभाव को व्यक्त करता है। इस प्रकार ब्राह्मण–सम्मान को धार्मिक और सामाजिक मर्यादा का अंग बताया गया है।

अरण्यकाण्ड

भगति कि साधन कहउँ बखानी।
सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।।
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती।
निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।। (दो. 15, चौ. 3)

2 15

भक्ति के साधनों का वर्णन करते हुए श्रीराम सबसे पहले विप्रों के चरणों में अत्यधिक प्रेम रखने और श्रुति की रीति के अनुसार अपने–अपने कर्म में लगे रहने की बात कहते हैं। यहाँ विप्र–सम्मान को भक्ति के साधनों में स्थान दिया गया है। साथ ही अपने कर्तव्य के अनुसार कर्म करने पर भी बल दिया गया है।

सुनु गंधर्भ कहउँ मैं तोही।
मोहि न सोहाइ ब्रम्हकुल द्रोही।। (दो. 32, चौ. 4)

श्रीराम कबंध से कहते हैं कि उन्हें ब्रह्मकुल का द्रोही व्यक्ति अच्छा नहीं लगता। इस कथन में ब्राह्मण–कुल के प्रति विरोध को अनुचित माना गया है। इससे ब्राह्मण–कुल के प्रति सम्मान और उसके विरोध को दोष मानने की भावना स्पष्ट होती है।

मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताके सब देव।। (दो. 33)

जो व्यक्ति मन, कर्म और वचन से कपट छोड़कर भूसुर अर्थात् ब्राह्मण की सेवा करता है, उसके प्रति ब्रह्मा, शिव सहित सभी देवताओं और स्वयं श्रीराम की अनुकूलता बताई गई है। यहाँ ब्राह्मण–सेवा को केवल बाहरी व्यवहार न मानकर मन, कर्म और वचन की शुद्धता से जोड़ा गया है।

सापत ताड़त परुष कहंता।
बिप्र पूज्य अस गावहि संता।।
पूजिअ बिप्र सील गुन हीना।
सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना।। (दो. 33, चौ. 1)

इस चौपाई में संतों के कथन के रूप में विप्र को पूज्य बताया गया है, भले ही उसके व्यवहार में शाप देना, कठोर बोलना आदि दोष बताए गए हों। आगे शील और गुण से रहित विप्र को भी पूज्य तथा गुण और ज्ञान से संपन्न शूद्र को पूज्य न मानने की बात कही गई है। यह कथन तत्कालीन वर्ण–व्यवस्था और उससे जुड़ी सामाजिक–धार्मिक मान्यताओं को व्यक्त करता है। अतः इस चौपाई को उसी तत्कालीन सामाजिक संदर्भ में समझना उचित है।

किष्किन्धाकाण्ड

देखि इंदु चकोर समुदाई।
चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई।।
मसक दंस बीते हिम त्रासा।
जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल नासा।। (दो. 16, चौ. 4)

14 इस प्रसंग में द्विज–द्रोह अर्थात् ब्राह्मण के प्रति विरोध को कुल के नाश का कारण बताया गया है। यहाँ ब्राह्मण के प्रति अनादर या विरोध को गंभीर दोष के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इससे द्विज–सम्मान से संबंधित तत्कालीन धार्मिक मान्यता का पता चलता है।

निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि।। (दो. 26)

इस प्रसंग में भगवान के अपनी इच्छा से अवतार लेने का उद्देश्य देवता, पृथ्वी, गौ और द्विजों के हित से जोड़ा गया है। यहाँ द्विजों को भगवान के अवतार के उद्देश्य से संबंधित महत्वपूर्ण धार्मिक वर्ग के रूप में प्रस्तुत किया गया है। साथ ही सगुण उपासकों के साथ भगवान के संबंध का भी उल्लेख मिलता है।

सुंदरकाण्ड

गो द्विज धेनु देव हितकारी।
कृपासिंधु मानुष तनुधारी।। (दो. 88, चौ. 2)

विभीषण रावण को श्रीराम की महिमा समझाते हुए उन्हें गौ, द्विज और देवताओं के हितकारी बताते हैं। यहाँ भगवान के मनुष्य रूप धारण करने का संबंध धर्म और लोककल्याण से जोड़ा गया है। इस प्रसंग में ब्राह्मण–हित को भगवान के व्यापक कल्याणकारी स्वरूप के एक अंग के रूप में बताया गया है।

सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते तर प्रान समान मम जिन्ह के द्विज पद प्रेम।। (दो. 48)

श्रीराम कहते हैं कि सगुण उपासना में लगे, परहित में निरत तथा नीति और नियम का पालन करने वाले वे भक्त उन्हें प्राणों के समान प्रिय हैं, जिनके हृदय में द्विज–पद के प्रति प्रेम है। यहाँ द्विज–सम्मान को भक्त के धार्मिक और नैतिक आचरण के एक गुण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

लंकाकाण्ड

अमल अचल मन त्रोन समाना।
सम जम नियम सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा।
एहि सम विजय उपाय न दूजा।। (दो. 79, चौ. 5)

इस प्रसंग में निर्मल और स्थिर मन, यम–नियम तथा विप्र और गुरु की पूजा को विजय के लिए अभेद्य कवच के समान बताया गया है। यहाँ बाहरी शक्ति के साथ मन की शुद्धता, संयम और धार्मिक अनुशासन को भी आवश्यक माना गया है। विप्र और गुरु की पूजा को विजय के महत्वपूर्ण साधनों में स्थान दिया गया है।

उत्तरकाण्ड

सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा।
धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा।
गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज।
नमत जिन्हहि सुर मुनि संकर अज।। (दो. 4, चौ. 3)

अयोध्या पहुँचने पर श्रीराम सभी द्विजों को प्रणाम करते हैं। धर्म के धुरंधर और रघुकुल के नाथ होने पर भी उनका यह विनम्र व्यवहार ब्राह्मण–सम्मान की भावना को व्यक्त करता है। इस प्रसंग में द्विजों के प्रति सम्मान को आदर्श आचरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

सब द्विज देहु हरषि अनुसासन।
रामचंद्र बैठहिं सिंघासन।
मुनि बसिस्ट के बचन सुहाए।
सुनत सकल बिप्रन्ह अति भाए।। (दो. 9, चौ. 3)

वसिष्ठ जी के कथन में सभी द्विजों से प्रसन्न होकर अनुमति देने की बात कही गई है, जिसके बाद रामचंद्र के सिंहासन पर बैठने का प्रसंग आता है। इससे राज्याभिषेक जैसे महत्वपूर्ण अवसर पर ब्राह्मणों की उपस्थिति और उनकी सहमति के महत्त्व का संकेत मिलता है। वसिष्ठ जी के वचनों को सुनकर विप्रों का प्रसन्न होना भी इसी भाव को स्पष्ट करता है।

सब उदार सब पर उपकारी।
बिप्र चरन सेवक नर नारी।।
एकनारि व्रत रत सब झारी।
ते मन बच क्रम पति हितकारी।। (दो. 21, चौ. 4)

रामराज्य के वर्णन में सभी लोगों को उदार और परोपकारी बताया गया है। इसी क्रम में नर–नारी को विप्रों के चरणों का सेवक कहा गया है। इससे पता चलता है कि आदर्श सामाजिक व्यवस्था में विप्रों के प्रति सम्मान और सेवा को सामान्य आचरण का हिस्सा माना गया है।

पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा।
मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा।।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा।
जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा।। (दो. 44, चौ. 4)

इस प्रसंग में मन, कर्म और वचन से विप्र–पद की पूजा को अत्यंत पुण्यकारी बताया गया है। जो व्यक्ति कपट छोड़कर द्विज–सेवा करता है, उसके प्रति मुनियों और देवताओं के अनुकूल होने की बात कही गई है। यहाँ द्विज–सेवा को धार्मिक आचरण और सद्व्यवहार से जोड़ा गया है।

सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना।
मेलि जने. लेहिं कुदाना।। (दो. 98, चौ. 1)

काकभुशुण्डि द्वारा कलियुग के दोषों का वर्णन करते हुए सामाजिक और धार्मिक मर्यादाओं में परिवर्तन की स्थिति बताई गई है। इसी क्रम में शूद्रों द्वारा द्विजों को ज्ञान का उपदेश देने और जने. धारण करने का उल्लेख किया गया है। यह प्रसंग तत्कालीन वर्ण–व्यवस्था की पारंपरिक मर्यादाओं में परिवर्तन को कलियुग के दोष के रूप में प्रस्तुत करता है।

ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस करहिं बिप्र गुर घात।। (दो. 11)

कलियुग के वर्णन में लोभ की बढ़ती प्रवृत्ति को नैतिक पतन से जोड़ा गया है। इसी संदर्भ में कौड़ी जैसे तुच्छ लाभ के लिए विप्र और गुरु के प्रति घात करने तक की बात कही गई है। यहाँ विप्र और गुरु के प्रति अपराध को कलियुग की गिरती हुई नैतिक और धार्मिक स्थिति के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है।

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह ते कछु घाटि।
जानइ ब्रम्ह सो बिप्रबर आँखि देखावहिं डाटि।। (दो. 99)

कलियुग के वर्णन में शूद्रों द्वारा द्विजों से विवाद करने और अपने को उनसे किसी प्रकार कम न मानने की बात कही गई है। साथ ही बल का प्रदर्शन करते हुए विप्रों को डाँटने का उल्लेख है। इस प्रसंग में पारंपरिक सामाजिक और धार्मिक मर्यादाओं के कमजोर होने को कलियुग के दोष के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

सुनु मम बचन सत्य अब भाई।
हरितोषन ब्रत द्विज सेवकाई।।
अब जनि करहिं बिप्र अपमाना।
जानेसु संत अनंत समाना।। (दो. 108, चौ. 6)

इस प्रसंग में द्विज–सेवा को भगवान को प्रसन्न करने वाले व्रत के रूप में बताया गया है तथा विप्र का अपमान न करने की शिक्षा दी गई है। साथ ही संतों को अनंत के समान मानने की बात कही गई है। इस प्रकार विप्र–सम्मान और संत–सम्मान दोनों को धार्मिक आचरण से जोड़ा गया है।

चरम देह द्विज कै मैं पाई।
सुर दुर्लभ पुरान श्रुति गाई।। (दो. 109, चौ. 2)

काकभुशुण्डि अपने अंतिम जन्म में द्विज–देह प्राप्त होने की बात कहते हैं और इसे देवताओं के लिए भी दुर्लभ बताते हैं। इस कथन में द्विज–शरीर को विशेष और दुर्लभ माना गया है। इससे तत्कालीन धार्मिक मान्यता में ब्राह्मण–जन्म को प्राप्त महत्त्व का संकेत मिलता है।

निष्कर्ष

तुलसीदास जी ने श्रीरामचरितमानस में ब्राह्मण, विप्र, द्विज और भूसुर आदि शब्दों का प्रयोग विभिन्न धार्मिक, सामाजिक और कथात्मक प्रसंगों में किया है। इन प्रसंगों में ब्राह्मणों को तप, ज्ञान, धार्मिक कार्य, यज्ञ, दान, सेवा और सम्मान से संबंधित बताया गया है। कई स्थानों पर ब्राह्मणों के प्रति सम्मान और सेवा को धार्मिक आचरण का महत्वपूर्ण अंग माना गया है।

कुछ प्रसंगों में विप्रों के तपबल, संतोष और रोष के प्रभाव का वर्णन मिलता है, जबकि अन्य स्थानों पर उनके धार्मिक कार्यों की रक्षा, सेवा और सम्मान की बात कही गई है। कलियुग के वर्णन में ब्राह्मणों तथा उनसे संबंधित पारंपरिक धार्मिक–सामाजिक मर्यादाओं के उल्लंघन को उस युग के दोषों के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रकार मानस में ब्राह्मण–विप्र–द्विज संबंधी उल्लेखों को उनके विशिष्ट प्रसंग, कथानक, धार्मिक मान्यता और तत्कालीन सामाजिक संदर्भ के आधार पर समझना अधिक उचित है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ

1. श्री रामचरित मानस, गीताप्रेस, गोरखपुर।
2. मानस–पीयूष, महात्मा अंजनी नन्दन शरण।
3. मारुति टीका, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी।

****